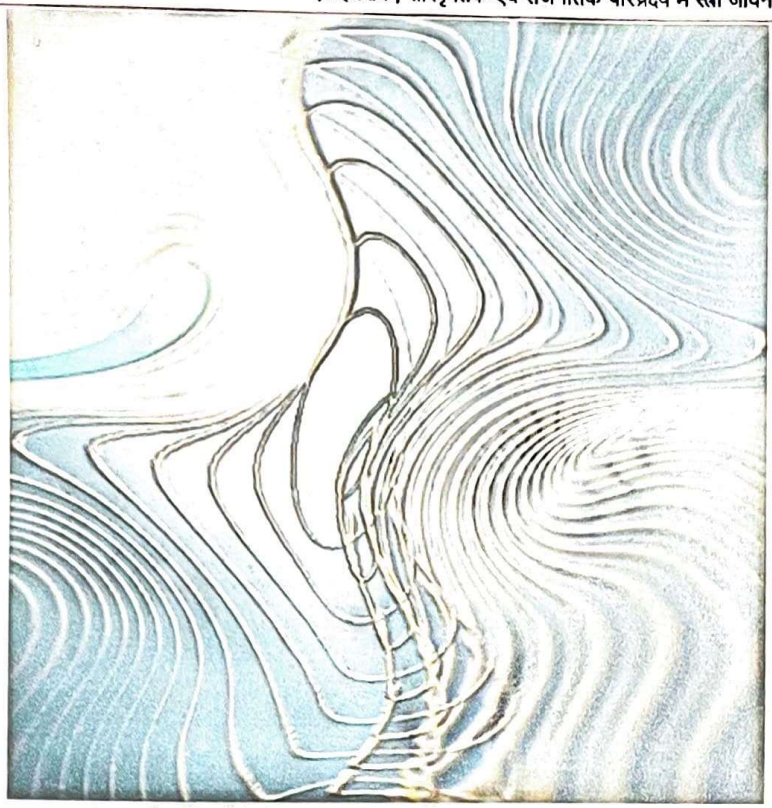

"ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री जीवन की विडम्बनाएँ और यशपाल का 'दिव्या' उपन्यास"

शोध-निर्देशिका

डॉ. ललिता राठोड़

हिंदी विभाग,

स्नातकोत्तर अधिव्याख्याता,

बलभीम महाविद्यालय, बीड़

डॉ. काकडे गोरख

हिन्दी विभाग,

सरस्वती भुवन कला एवं

वाणिज्य महाविद्यालय, औरंगाबाद।

डॉ. शेख अफरोज फातेमा

हिन्दी विभाग,

रचनाकार

विश्व की पहली, यूनिकोडित हिंदी की सर्वाधिक प्रसारित, समृद्ध व लोकप्रिय ई-पत्रिका - रचनाकार संपर्क : rachanakar@gmail.com अधिक जानकारी यहाँ [लिंक] देखें.

"ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री जीवन की विडम्बनाएँ और यशपाल का दिव्या उपन्यास"

साझा करें:

0

"ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री जीवन की विडम्बनाएँ और यशपाल का 'दिव्या' उपन्यास" शोध -निर्देशिक...

'दिव्या' यह सन् 1945 में नारी शोषण और दासों की दुर्दशा को आधार बनाकर बेजोड़ उपन्यास है। इतिहास और कल्पना का इतना सुंदर मेल हुआ है कि उपन्यास पढ़ते समय पाठक हजारों साल पुराने ऐतिहासिक वातावरण को अनुभव करने लगता है। साथ ही चलचित्र की भाँति सारे दृश्य उसके आँखों के सामने से गुजरते दिखाई देते हैं। स्वयं यशपालजी ने उपन्यास के 'प्राक्कथन' में कहा है - "दिव्या इतिहास नहीं, ऐतिहासिक कल्पना मात्र है। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर व्यक्ति और समाज की प्रवृत्ति और गति का चित्र है। लेखक ने कला के अनुराग से काल्पनिक चित्र में ऐतिहासिक वातावरण के आधार पर यथार्थ का रंग देने का प्रयत्न किया है।"1

उपन्यास में इतिहास का सजीव वर्णन ही इस उपन्यास की ऐतिहासिक सार्थकता को दर्शाता है। "सफल ऐतिहासिक उपन्यास लिखना कठिन कार्य है। इसके लिए विशाल अध्ययन और अनुभव की आवश्यकता होती है। लेखक को सदा सर्तक रहना पड़ता है कि वह जो बात कह रहा है वह उस युग के अनुकूल है अथवा नहीं। वह इतिहास के साथ मनमानी नहीं कर सकता, उसे पूर्वप्रतिष्ठित मान्यताओं का भी विचार करना पड़ता है। इसलिए लेखक ऐतिहासिक उपन्यासों के प्रणयन में बंधन में रहता है। उसे एक निश्चित सीमा में बांधकर कार्य करना पड़ता है।"2 परंतु यशपाल जी ने अधिकांश रूपों में इन सभी बातों की ओर ध्यान दिया है। 'दिव्या' में बौद्धकालीन वेशभूषा और वातावरण को बहुत ही सजीव ढंग से प्रस्तुत किया गया है और तत्कालीन समाज के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सभी पहलुओं को बहुत सहज और रोचक ढंग से इसमें चित्रित गया है। 'दिव्या' का सागल के सर्वश्रेष्ठ कुल में जन्म होकर भी वह वेश्या का जीवन जीने पर विवश होती है और राजनीति के घात-प्रतिघातों का शिकार भी होती है। ऐसी अनेक स्त्री जीवन से संबंधित विडम्बना उपन्यास में दिखाई देती हैं।

इस उपन्यास में तत्कालीन समाज पर बौद्ध धर्म के प्रभाव और उसकी प्रवृत्तियों का वर्णन मिलता है। "इतिहास, राजनीति तथा धर्म मूलतः एक ही चीज है। राजनीति अल्पकालीन धर्म और धर्म दीर्घकालीन राजनीति और इनका लिपिबद्ध रूप ही इतिहास बन जाता है। मनुष्य सदा ही सत्ता लोलुप रहा है। और सत्ता प्राप्ति के लिए सदैव भीषण से भीषण नरसंहार होते रहे हैं। इस उपन्यास में भीषण युद्ध का चित्रण है और तद्जनित दुष्परिणाम का भी। जनता सदैव ही राजनीति और राजनीतियों के हाथ का खिलौना रही है और इन उपन्यासों में उसकी यही नियति है - चाहे वह गणतंत्र की नागरिक हो, चाहे एकतंत्र की।"3

'दिव्या' में ऐतिहासिकता के साथ-साथ सांस्कृतिक परिदृश्य भी बहुत बढ़िया ढंग से दर्शाया गया है। कला का सम्मान, उत्सव का आयोजन, 'सरस्वती पुत्री' का सम्मान आदि से, सांस्कृतिक वातावरण का -ान होता है। 'मधुपुर्व' के उत्सव के समय का वर्णन बड़ा ही मोहलेनेवाला है - "मण्डप कलशों, कदल-खम्भों, तोरणों, बसन्त आरंभ से पल्लवित आम्रपत्र के बन्दनवारों और मंजरियों से सुसज्जित था। वातावरण अनेक प्रकार के पुष्पों की गन्ध और सुगन्धित धूम्रों से सुरभित था। अभिजात पुरूष और कुलनारियाँ अपने वर्ण और वंश की स्थिति के अनुकूल और पर्व के योग्य वस्त्राभूषण धारण किए हुए थी।"4 'मधुपर्व' के इस वर्णन से कला और संस्कृति के प्रति का सम्मान पता चलता है। कला की अधिष्ठात्री, नगरश्री, राजनर्तकी देवी मल्लिका का यथास्थल में सम्मान मधुपर्व के उत्सव में कला की प्रतियोगिताओं में सर्वश्रेष्ठ युवती को सरस्वती पुत्री का सम्मान आदि। सर्वश्रेष्ठ कलाविद नर्तकी दिव्या सरस्वती पुत्री का सम्मान प्राप्त करती है। यह सभी वर्णन से बौद्धकालीन ऐतिहासिक वातावरण में संस्कृति का कितना महत्त्व है यह -ात होता है। जहाँ एक ओर यह उपन्यास गौरवशाली संस्कृति के चित्र सामने रखता है वही दूसरी ओर उस संस्कृति में स्त्री जीवन की विडम्बना को भी सामने लाता है और उससे नीजात पाने के लिए सीरो जैसे चरित्र के माध्यम से समानता, अधिकारों की बातें उठाई हैं। उपन्यास में सीरो अपने पति से कहती है - "मैं तुम्हारी क्रीत दासी नहीं हूँ। तुम मेरे आश्रित हो, मैं तुम्हारी आश्रिता नहीं हूँ। मैं तुम्हारे पिंजरे में बद्ध सारिका नहीं हूँ केवल तुम्हारी अंग-सेवा के लिए दासी नहीं हूँ। ... तुम वेश्याओं से विलास नहीं करते ? कितनी दासियाँ तुम्हारी पर्यक सेवा के लिए हैं। भोग के भिन्न-भिन्न सुखों और रसों के लिए तुम्हें कितनी नारियाँ चाहिए ? मेरे लिए भी संसार में केवल तुम ही एक पुरूष नहीं हो ?"5 ऐसे अनेक बुनियादी सवालों को उपन्यास उठाता है और स्त्री जीवन की विडम्बनाओं को प्रस्तुत करता है।